पं० दीन दयाल उपाध्याय के विचार : जम्मू कश्मीर के विशेष संदर्भ में

डॉ0 (श्रीमती) मंजू आर्या*

सारांश

इस बात से हम सभी परिचित हैं कि जम्मू–कश्मीर का एक अलग संविधान है जो एक अपवाद स्वरूप है क्योंकि भारत का केवल एक संविधान है जो जम्मू–कश्मीर को छोड़कर पूरे भारत पर लागू होता है। पं0 दीन दयाल जी का आजीवन यही प्रयास रहा है कि जम्मू–कश्मीर में भी भारत के संविधान को लागू किया जाना चाहिए। जिससे कि जम्मू–कश्मीर तथा अन्य राज्यों में समानता बनी रहे। प्रस्तुत शोध में इस बात का प्रयास किया जा रहा है कि पं0 दीन दयाल जी ने जम्मू–कश्मीर में कश्मीर के संविधान को लागू करवाने के लिए क्या–क्या प्रयास किये। जिसकी वर्तमान में भी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

जम्मू–कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। इसलिए यह आवश्यक है कि वहां के निवासियों को भी देश के अन्य नागरिकों की तरह प्रदेश की संविधान सभा की स्वीकृति के अनुसार मतदान का अवसर दिया जाय। राज्य में अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व का तरीका राज्य के लोगों को अन्य भागों के लोगों की तरह विभिन्न दलों द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों के पक्ष–विपक्ष में मतदान करने से रोकता है। कश्मीर से राष्ट्रपति द्वारा लोकसभा व राज्यसभा के सदस्य मनोनीत किये जाते हैं और वहां के लोगों को देश के लिए प्रस्तावित कार्यक्रमों पर विचार प्रदान करने का अवसर नहीं मिलता है। वे केवल राज्य की गतिविधियों तक ही सीमित होते हैं। इसलिए वे अपना सर्वव्यापी दृष्टिकोण विकसित नहीं कर पाते हैं।

भारत का राष्ट्रवादी विचार है कि भारत का संविधान कश्मीर में भी लागू किया जाना चाहिए। लेकिन अभी तक जम्मू और कश्मीर की सरकार अपने अलग संविधान पर ही अड़ी हुई है। हम उनके इस विचार को समझने में सक्षम नहीं हैं क्योंकि यह अलगाववाद की भावना के सिवा और कुछ नहीं है। जम्मू कश्मीर की संविधान सभा यदि अपना अलग संविधान बनाती भी है तो वह मूलभूत रूप से भारतीय संविधान से पृथक नहीं होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि वहां के सभी नागरिकों को मूल अधिकार प्रदान किये जायें और यह राज्य भी सर्वोच्च न्यायालय, ऑडिटर जनरल और निर्वाचन आयोग के अधीन रहे।[1]

संविधान इस तथ्य को स्वीकार करता है कि जम्मू कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। लेकिन वहां पर अलग संविधान का होना भारत की एकता और अखण्डता के लिए अभिशाप है। वहां के संविधान में कुछ ऐसी व्यवस्थाएं निहित हैं, जिसके कारण वहां की जनता सम्पूर्ण देश के शासन कार्यों में भागीदारी नहीं कर पाती है। यहां इस बात पर विचार किया जाएगा कि राज्य के लिए संविधान की आवश्यकता क्यों थी और उसका औचित्य कहां तक है।

अंग्रेजों द्वारा जम्मू कश्मीर के अलग संविधान का विचार उस समय किया गया जब वह भारत छोड़कर जा रहे थे। उस समय ब्रिटिश भारत का शासन औपनिवेशिक सरकारों को सौंपा जा रहा था। उस समय देशी राज्यों को इस बात की स्वतंत्रता प्रदान की गयी कि वे किसी भी उपनिवेश भारत व पाकिस्तान में शामिल हो सकते हैं।

पं0 नेहरू ने संसद में घोषणा की कि यदि वहां के महाराज ने सम्मिलित समझौते पर हस्ताक्षर नहीं किये होते, तब भी भारत ने अपनी सेनाएं कश्मीर की रक्षा के लिए भेज दीं होती, क्योंकि देश का कोई भी क्षेत्र जो दूसरे किसी देश से सम्बद्ध नहीं है, वैधानिक दृष्टि से वह भारत का अंग है। भारत की संविधान सभा को सम्पूर्ण देश के लिए संविधान बनाने का अधिकार है। जम्मू कश्मीर भारत का अंग है, इसलिए वह उनके लिए भी संविधान बनाने की शक्ति रखती है। जबकि बख्शी गुलाम मोहम्मद घोषणा करते हैं कि इस प्रभुसत्ता सम्पन्न सभा अर्थात जम्मू–कश्मीर विधानसभा के निर्णय को संसार में कोई भी नहीं बदल सकता है, ऐसा कहकर वे भारतीय संसद की प्रभुसत्ता को चुनौती देते हैं।

प्रभुसत्ता के अन्तर्गत कोई दूसरी प्रभुसत्ता विद्यमान नहीं रह सकती। या तो भारतीय जनता प्रभुसत्ता सम्पन्न है और जम्मू–कश्मीर के लोग उसके एक अंग हैं अथवा यदि जम्मू–कश्मीर स्वयं को स्वतंत्र प्रभुसत्ता सम्पन्न घोषित करता है तो भारतीय संसद द्वारा स्वीकृत किसी भी कानून का वहां लागू होना साम्राज्यवाद का प्रतीक है। फिर चाहे भारत और जम्मू–कश्मीर के सम्बन्ध किसी भी प्रकार के क्यों न हों।

बख्शी और उसके साथी राज्य में स्वतंत्र संविधान के निर्माण को सिद्ध करने के लिए अनुच्छेद 370 का हवाला देते हैं। यह बात सही है कि अनुच्छेद 370 जम्मू–कश्मीर में भारतीय संविधान के लागू होने पर कुछ नियंत्रण लगाता है, किन्तु हमें

*असि0प्रो0, राजनीति विज्ञान विभाग, एल0एस0एम0, रा0स्ना0महा0, पिथौरागढ

यह नहीं भूलना चाहिए कि यह एक अस्थायी व्यवस्था थी। जिस परिच्छेद में यह अनुच्छेद रखा गया है, उसकी अन्तिम धारा में यह व्यवस्था है कि यह अनुच्छेद बहुत पहले ही समाप्त हो जाना चाहिए था। इसके समाप्त न होने का उत्तरदायित्व राज्य सरकार पर है। वास्तव में आज आवश्यकता इस बात की है कि राज्य सरकार प्रस्ताव पास करके इस अनुच्छेद को समाप्त कर दे और समस्त विवाद समाप्त हो जाय।

इस प्रश्न को सुरक्षा परिषद् में ले जाना एक बड़ी गलती थी, इस बात का अनुभव पं नेहरू जी भी कर चुके थे क्योंकि राष्ट्र संघ में इसका हल निकालना सम्भव नहीं है। यह अनुच्छेद भारत के संविधान निर्माण तक ही उचित था, आज उस पृथकतावादी अनुच्छेद को बरकरार रखना पाकिस्तान को समर्थन प्रदान करना होगा।

कहा जाता है कि भारत और कश्मीर की नागरिकता में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु भारतीय नागरिकों को दिये गये अधिकार राज्य के लोगों को प्राप्त नहीं है और अन्य स्थानों में रहने वालों को राज्य के अधिकार प्रदान नहीं किये गये हैं। सर्वोच्च न्यायालय का भी वहां पर सीधा अधिकार क्षेत्र नहीं है, राज्य में हाइकोर्ट के जजों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा न करके सदर–ए–रियासत द्वारा की जाती है। जम्मू कश्मीर के संविधान द्वारा राष्ट्रपति की शक्तियां तक सीमित कर दी गयी हैं।[2]

जम्मू–कश्मीर में आवागमन के लिए परमिट प्रणाली लागू थी, जिसको समाप्त करने में जम्मू–कश्मीर के मुख्यमंत्री श्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने सहयोग दिया, उनका यह कदम उस राज्य की जनता और भारत के बीच एकता स्थापित करने वाला था। डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने परमिट प्रणाली को चुनौती दी थी। उन्होंने कश्मीर में बिना परमिट के प्रवेश किया। उन्होंने कहा कि स्वतंत्र भारत के नागरिक होने के नाते उनके पास बगैर किसी बाधा के देश के किसी भी हिस्से में जाने का पूरा अधिकार है। उनका अनुसरण करते हुए सैकड़ों लोगों ने बिना परमिट के कश्मीर में आवागमन किया। डॉ0 मुखर्जी के बलिदान की वजह से यह घटनाक्रम बदल गया। कश्मीर की जनता को यह अवसर देना होगा कि वह भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों का लाभ उठायें। इसके लिए कश्मीर को सर्वोच्च न्यायालय, चुनाव आयोग के अधिकार क्षेत्र में लाना होगा और लोकसभा में प्रत्यक्ष चुनाव के प्रावधान को प्रभावी करना होगा।[3]

वर्तमान परमिट प्रथा समाप्त करने, उच्चतम न्यायालय और चुनाव आयोग का अधिकार क्षेत्र जम्मू–कश्मीर तक लागू करने के निर्णय सही दिशा में लिए गये कदम हैं। इन दिनों प्रदेश विधानसभा ने इन विषयों पर बिल पारित किये और राष्ट्रपति ने उनके आधार पर आदेश जारी कर दिये। इससे लोगों की लम्बे समय से चली आ रही मांग पूरी हुई। परमिट प्रथा अप्रैल 1959 में समाप्त हुई और अन्य बिल उसके कुछ महीनों पश्चात् पारित हुए।

संविधान की धारा 136 अब जम्मू–कश्मीर में भी लागू है। इसके अनुसार उच्चतम न्यायालय कश्मीर से न केवल अपीलों को सुन सकता है बल्कि कुछ मामलों में मूल मुकदमों की सीधे सुनवाई भी कर सकता है। संविधान के अनुच्छेद 218, 220 और 222 भी जम्मू–कश्मीर में लागू होंगे। अनुच्छेद 218 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को सुरक्षा प्रदान की गयी है। संसद के दोनों सदनों की सहमति के बिना उन्हें हटाया नहीं जा सकता। राष्ट्रपति को अधिकार दिया गया है कि वह बाहर से राज्य में और राज्य से बाहर न्यायाधीशों का स्थानान्तरण कर सकता है, परन्तु ऐसा करते हुए उसे सदर–ए–रियासत से परामर्श करना आवश्यक है। देखने में यह बात साधारण सी लगती है परन्तु इससे जम्मू–कश्मीर और भारत के अन्य राज्यों की अपेक्षा भिन्न सम्बन्ध प्रकट होते हैं, जबकि अन्य सभी राज्यों के संदर्भ में राष्ट्रपति स्वविवेक से कार्य कर सकता है। बाहरी आक्रमण की स्थिति में आपातकाल की घोषणा ही इस नियम का अपवाद है।

जम्मू और कश्मीर की सम्प्रभुता वहां की सरकार और जनता में निहित है। लोगों को व्यक्तिगत रूप से केन्द्र से सीधे व्यवहार नहीं करने दिया जाता। केन्द्र से जुड़े सभी मामलों में उन्हें प्रदेश सरकार के माध्यम से ही प्रतिनिधित्व मिलता है। इसी प्रकार केन्द्र सरकार भी प्रदेश सरकार और विधानसभा की सहमति के बिना राज्य में अपने अधिकारों का प्रयोग नहीं कर सकती। अनुच्छेद 370 के अनुसार प्रदेश के संविधान की किसी भी धारा में परिवर्तन राष्ट्रपति कर सकता है। संसद में उस पर चर्चा और इसे संसद में पारित करवाना आवश्यक नहीं है, परन्तु राष्ट्रपति तब तक कोई आदेश पारित नहीं कर सकता, जब तक कि उस विषय में प्रदेश विधानसभा प्रस्ताव पारित न कर दे। जम्मू कश्मीर के लोग लोकसभा के प्रतिनिधि सीधे नहीं चुनते। उन्हें राष्ट्रपति मनोनीत करता है, परन्तु उससे पहले उनका विधानसभा के द्वारा चुना जाना आवश्यक होता है। यदि जम्मू कश्मीर भारत का हिस्सा है तो भारतीय संविधान के सारे प्रावधान वहां भी पूरी तरह लागू होने चाहिए, ताकि वहां के नागरिक भी भारत के अन्य नागरिकों की तरह प्रत्येक क्षेत्र में अपनी भूमिका निभा सकें।

चुनाव आयोग के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत सामान्य रूप से राज्य को लाया गया है। इसकी धाराएं 325, 326, 327 और 328 जम्मू कश्मीर में लागू नहीं है। जन प्रतिनिधित्व कानून जिसके अधीन विभिन्न चुनाव होते हैं, कश्मीर में लागू नहीं है। प्रदेश के बाहर का भारतीय नागरिक यहां चुनाव नहीं लड़ सकता, यहां तक कि विधानसभा क्षेत्र से भी नहीं, जिससे कि वह बाद में राष्ट्रपति द्वारा लोकसभा में मनोनीत हो सके।

भारतीय जनसंघ ने इसीलिए अपने नागपुर अधिवेशन में पारित प्रस्ताव में संविधान के अनुच्छेद 370 को जो कि

इसका अस्थायी प्रावधान है, समाप्त करने का आग्रह किया है। जब तक संविधान में यह अनुच्छेद रहेगा, तब तक जम्मू और कश्मीर के बीच संवैधानिक सम्बन्ध सामान्य नहीं होंगे। राज्य को दिया गया विशेष दर्जा केवल राज्य सरकार को ही विशेषाधिकार देता है, राज्य के लोगों को नहीं। इसलिए यह आवश्यक है कि राज्य के नागरिकों को वे सारे अधिकार भोगने के अवसर मिलें, जो अन्य नागरिकों को उपलब्ध हैं और भेदभाव समाप्त किया जाय।[4]

वह 23 जून का दिन था, जब डॉ0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने तत्कालीन जम्मू कश्मीर के मुख्यमंत्री शेख अब्दुल्ला के कारागार में एक शहीद की मृत्यु को अंगीकार किया। यह सही है कि जम्मू कश्मीर प्रजा परिषद् और जनसंघ द्वारा किये गये आन्दोलनों तथा डॉ0 मुखर्जी के बलिदान के कारण इस राज्य के कानूनों और भारत के सम्बन्धों में अनेक सुधार हुए हैं, परन्तु मूल रूप से संविधान तथा जनता के प्रति होने वाले व्यवहारों में आज भी साधारण से ही परिवर्तन दिखेंगे। जम्मू कश्मीर राज्य आज भी भारत का अविभाज्य अंग नहीं है। जम्मू कश्मीर में भारत सरकार नहीं है। वहां पर शासन प्रान्तीय सरकार के द्वारा ही होता है। भारतीय संसद की प्रभुसत्ता इस राज्य के लिए प्रभुसत्ता नहीं है। राज्य सरकार इस बात को समझाने का प्रयास कर रही है कि जनता को इस प्रकार की भेदभाव की नीति जारी रखने में अनेक लाभ हैं। इससे भारत और जम्मू कश्मीर की जनता के मध्य एक मनोवैज्ञानिक खाई उत्पन्न की जा रही है और राज्य के आर्थिक विकास में भी बाधा उत्पन्न की जा रही है। जम्मू कश्मीर राज्य में भारतीय उद्योगपतियों को अपना उद्योग स्थापित करने की अनुमति नहीं दी जाती।

डॉ0 मुखर्जी इन सभी पृथकतावादी प्रयासों के घोर विरोधी थे। वे संविधान की 370वीं धारा को निकालने के पक्षपाती थे, जो कि अस्थायी रूप से संविधान में प्रविष्ट करायी गयी थी। उन्होंने चेतावनी दी थी कि भारत सरकार कश्मीर के लिए विशेष प्रकार की छूट देती है तो इसी प्रकार की मांग अनेक ओर से की जाने लगेगी। उनके सुझाव आज सत्य सिद्ध हो रहे हैं। जम्मू के मार्ग पर डॉ0 मुखर्जी ने एक सभा में कहा था, विधान दूंगा या जान दूंगा। उनके विधान का अर्थ राज्य का एक संविधान नहीं था। वे भारतीय संविधान को कश्मीर की जनता को प्रदत्त करना चाहते थे। आज भी कश्मीर राज्य का एक संविधान है, पर भारतीय संविधान उनका संविधान नहीं है। संविधान की 370वीं धारा का निष्कासन देश और कश्मीर राज्य की जनता में जागरूकता तथा चेतना उत्पन्न करने के लिए जादू जैसा कार्य करेगा।[5]

प्रधानमंत्री नेहरू द्वारा न्यूयॉर्क में बयान दिया गया, जिसमें उन्होंने कश्मीर में यथास्थिति बनाये रखने की बात कही थी। इस बयान के विरोध में प्रस्ताव पारित किये गये और उसकी निन्दा करते हुए भाषण दिये गये। यह स्पष्ट किया गया कि पं0 नेहरू के इस बयान का अर्थ यह है कि भारत ने पाकिस्तान द्वारा कश्मीर के एक तिहाई भू–क्षेत्र को हथियाना स्वीकार कर लिया है और इस क्षेत्र पर अपने उचित दावे को त्याग दिया है।

दिल्ली प्रदेश जनसंघ के अध्यक्ष प्रो0 बलराज मधोक ने करोलबाग में एक जनसभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि पाकिस्तान के साथ तुष्टिकरण की नीति कभी लाभप्रद नहीं होगी। पाकिस्तान को संतुष्ट करने के लिए पं0 नेहरू ने भारतीय हितों के विरूद्ध जाकर, नदी जल बंटवारे की संधि की, ऐसा करके उन्होंने पाकिस्तान की भूख को अधिक जगाया है। लखनऊ में भारतीय जनसंघ की शहरी शाखा द्वारा आयोजित एक सभा में जनसंघ अध्यक्ष पीताम्बर दास ने कहा कि पाकिस्तान को नदी जल बंटवारे की अत्यधिक उदारता भरी भेंट देने पर भी आक्रमक पाकिस्तान की प्यास नहीं बुझी।
पीताम्बर दत्त शर्मा ने कहा कि आज तक भारत ने पाकिस्तान के साथ जितनी भी संधियां और समझौते किये हैं, हर बार भारत को उनमें घाटा हुआ है। पं0 नेहरू जी की विश्व राजनीति में मध्यस्थ की भूमिका निभाने की निन्दा करते हुए कहा कि उनका ऐसा करना भारतीय हितों के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहा है।

मंगलौर के स्थानीय मैदान में एक बड़ी सभा में महासचिव श्री दीनदयाल उपाध्याय ने कहा कि कश्मीर एक ऐसा राज्य है, जिस पर पाकिस्तान और चीन के आक्रमण का प्रभाव पड़ा है। इसलिए कश्मीर समस्या वह कसौटी है, जिस पर भारत के गृह मंत्रालय की नीतियां ही नहीं, सुरक्षा और विदेश नीति को भी परखा जाएगा। पं0 नेहरू के कश्मीर विषयक नवीनतम बयानों ने दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार एक गम्भीर भ्रम पैदा किया है। यहां तक कि यथास्थिति के बयान का अर्थ पाक अधिकृत कश्मीर के क्षेत्रों को छोड़ देना लगाया जा रहा है।

पं0 दीनदयाल उपाध्याय की घोषणा के अनुसार 23 अक्टूबर रविवार को देश भर की भारतीय जनसंघ की शाखाओं ने कश्मीर दिवस मनाया। कलकत्ता में यह दिन जनसंघ के स्थापना दिवस 21 अक्टूबर के साथ सामंजस्य बैठाते हुए अन्य स्थानों से दो दिन पहले मनाया गया। अमृता समाज हॉल में एक सभा का आयोजन किया गया। इस सभा में कश्मीर विषय पर पारित प्रस्ताव में कहा गया कि भारत द्वारा पाकिस्तान की रजामंदी और संतुष्टि के दृष्टिकोण से पाकिस्तान के अयूब खां को पुनः तलवारें लहराने का मौका दिया है। इसमें मांग की गयी कि पाकिस्तान के साथ हथियाए गए भारतीय क्षेत्रों को खाली करने के अतिरिक्त अन्य किसी बात पर बातचीत अथवा चर्चा न की जाय।[6] कश्मीर के प्रधानमंत्री प्रीमियर बख्शी गुलाम मुहम्मद को राज्य के पृथक संविधान को रद्द कर देना चाहिए और सम्पूर्ण जम्मू कश्मीर में भारतीय संविधान लागू करना चाहिए और इस प्रकार जम्मू कश्मीर के भारत में परिग्रहण को पूर्ण एकीकरण में परिवर्तित करने का सम्मान अर्जित करना

चाहिए। लद्दाख पर हुए आक्रमण से न निपटने के लिए भारत सरकार की तुलना में कश्मीर सरकार अधिक दोषी थी। आक्रमण को दिये गये इस उकसावे की जांच किये जाने की आवश्यकता है। हमारी बहादुर सेना नहीं बल्कि यह भारत सरकार है, जो राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए चुनौती का सामना करने से डर रही है।[7]

जम्मू में 6 फरवरी को परिग्रहण दिवस मनाया गया। चूंकि 6 फरवरी 1954 को राज्य की संविधान सभा ने उस परिग्रहण का अनुमोदन किया था, जो महाराजा द्वारा पहले ही 27 अक्टूबर, 1947 को किया जा चुका था। उसके बाद से राज्य सरकार यह दिवस मनाती रही है। लेकिन 6 फरवरी को परिग्रहण दिवस के रूप में मनाये जाने के निहितार्थ गहरे और अधिक गम्भीर हैं। इसका अर्थ होता है, महाराजा द्वारा हस्ताक्षरित विलय के पत्र को रद्द करना। बख्शी सरकार की दृष्टि में परिग्रहण पूर्ण और अन्तिम केवल तब होगा, जब उसका अनुसमर्थन कर लिया जाएगा। लेकिन भारत सरकार का रूख यह रहा है कि महाराजा द्वारा किया गया राज्य का विलय अन्तिम और अटल था। श्री कृष्ण मेनन ने इसी आधार पर सुरक्षा परिषद् के समक्ष भारत का पक्ष प्रस्तुत किया था। इसी आधार पर भारत के पास वैध सेनाओं को भेजकर पाकिस्तानी कबीलों की घुसपैठ से राज्य की रक्षा करने का वैधानिक औचित्य है। जम्मू कश्मीर राज्य भौगोलिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भारत का अभिन्न अंग रहा है। जम्मू–कश्मीर को छोड़कर कोई अन्य राज्य परिग्रहण दिन का उत्सव नहीं मनाता है। यह केवल अलगाववाद की भावना को जीवित रख सकता है और लोगों को याद दिलाता रह सकता है कि राज्य का एक प्रकार का अलग अस्तित्व है।

रियासतों ने अपने शासकों द्वारा की गयी पहल पर भारत में विलय को स्वीकार कर लिया था, लेकिन यह केवल तीन विषयों के संदर्भ में ही था, जैसे– रक्षा, विदेश और संचार। लेकिन जैसे ही लोकप्रिय सरकारों का गठन किया गया और सत्ता उनके हाथों में पहुंची, उन्होंने राज्यों को शेष देश के साथ एकीकृत करने के लिए कदम उठाये। आज परिणाम यह है कि जम्मू कश्मीर के अलावा जहां तक अन्य सभी राज्यों का सम्बन्ध है, हमारा एक एकीकृत और समान संविधान है। राज्य की संवैधानिक स्थिति के ये सभी विशिष्ट गुण किसी भी ढंग से लोगों को लाभान्वित नहीं करते हैं। लम्बे समय से उन्हें देश के सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने का मौलिक अधिकार प्राप्त नहीं था। यहां तक कि उन्हें भारत में और भारत से यात्रा करने के लिए परमिट लेने के भेदभाव पूर्ण व्यवहार का भी सामना करना होता था।

राज्य के नागरिकों को लोकसभा के लिए अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करने के लिए कोई अधिकार नहीं था। जम्मू–कश्मीर राज्य से लोकसभा के लिए सदस्यों को, राज्य की विधानसभा द्वारा इस सम्बन्ध में की गयी सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किया जाता है। इस प्रकार राज्य विधानसभा न केवल राज्यसभा के लिए बल्कि लोकसभा के लिए भी सदस्यों का चुनाव करती है। लोगों को उनके प्रभाव से और प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व से वंचित कर दिया जाता है। भारत के लोग लोकसभा के माध्यम से देश पर राज करते हैं। लेकिन कश्मीर के लोग भारत के शासन में शामिल नहीं होते। राज्य का कोई नागरिक लोकसभा का चुनाव नहीं लड़ सकता है। इस प्रकार वह भारत का प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति बनने की आकांक्षा नहीं कर सकता है। उसका राजनीतिक अस्तित्व अपने राज्य की सीमाओं तक ही सीमित है।

जहां तक भारत का प्रश्न है तो हमारा संविधान किसी विक्षिप्त और अनुन्मोचित दिवालिये को छोड़कर हर नागरिक को यह अधिकार देता है। इन भेदभाव पूर्ण प्रावधानों की व्यवस्था हमने क्यों की? क्या हमें जम्मू–कश्मीर राज्य के लोगों पर भरोसा नहीं है? उन पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। भारत की जनता उन पर पूरा विश्वास करने के लिए तैयार है। लेकिन यह बख्शी गुलाम मुहम्मद की सरकार है, जो उन पर अविश्वास करती प्रतीत होती है। वे नहीं चाहते कि राज्य के लोगों और भारत की संसद के बीच सीधा सम्बन्ध हो। इस प्रत्यक्ष सम्बन्ध के बिना राज्य के लोग सिर्फ कश्मीरी बने रहेंगे और कभी भी भारतीय नहीं बन पायेंगे। जहां तक संविधान का सम्बन्ध है, उन्हें इस अधिकार से वंचित करने का अर्थ है, उन्हें उनकी राष्ट्रीयता और नागरिकता से वंचित करना। यह हमारे संविधान पर एक कलंक है। यह आवश्यक है कि इन घृणित और भेदभाव पूर्ण प्रावधानों को तुरन्त समाप्त किया जाय और राज्य के नागरिक हमारे देश के गणतांत्रिक और लोकतांत्रिक शासन में योग्य और विश्वस्त भागीदारों के रूप में शामिल हों।[8]

कश्मीर पर पाकिस्तान का पक्ष कारणों और तर्कों के आधार पर नहीं रखा जा सकता। पाकिस्तान तर्क देता है कि कश्मीर में मुसलमानों की संख्या ज्यादा है इसलिए कश्मीर पाकिस्तान के अधीन होना चाहिए। लेकिन यह तर्क गलत है क्योंकि–पाकिस्तान का विभाजन मुसलमान और हिन्दू के आधार पर नहीं हुआ था। यदि ऐसा होता तो भारत में एक भी मुसलमान नहीं होता और पाकिस्तान में एक भी हिन्दू नहीं होता। जिन्ना इसी आधार पर विभाजन चाहते थे, पाकिस्तान तो उन्हें मिला लेकिन मुस्लिम व हिन्दू के आधार पर नहीं, जैसा वह चाहते थे।

पाकिस्तान का सबसे मजबूत बिन्दु यह है कि उसे पश्चिमी देशों से समर्थन मिला है। लेकिन प्रतिक्रिया स्वरूप सोवियत रूस भी भारत के पक्ष में खड़ा हो गया। रूस के वीटो ने ही कश्मीर में संयुक्त राष्ट्र बलों की तैनाती के षड्यन्त्र को असफल किया था। पाकिस्तान ने भारत के हितों को नष्ट करने के लिए संयुक्त राष्ट्र में हमारा प्रतिनिधित्व कर रहे श्री वी के

कृष्ण मेनन के व्यक्तिगत पूर्वाग्रह का भी लाभ उठाया। सोवियत रूस इस बात का फायदा उठा सकता है कि पूरे विश्व में भारत का मित्र कोई और नहीं है और पश्चिमी देश भारत के हितों के खिलाफ सक्रिय हैं। पश्चिमी देशों ने पाकिस्तान को सलाह दी कि वह इस मुद्दे को सुरक्षा परिषद् में न उठाये, लेकिन पाकिस्तान ने उनके परामर्श को अनसुना कर दिया और उनका विश्वास खो दिया। सुरक्षा परिषद् में जब कश्मीर पर चर्चा हुई तो पाकिस्तान ने इस बात को स्वीकार किया कि वह चीन के साथ एक समझौते में शामिल हो गया है। ऐसा करके उसने पश्चिमी देशों को चेतावनी दी कि यदि कश्मीर हड़पने के मुद्दे पर वे उसका साथ नहीं देंगे तो वह कम्युनिस्ट चीन के साथ शामिल हो जाएगा। अब इस बात की पूरी सम्भावना थी कि कश्मीर पर आक्रमण करने और हमारे क्षेत्र का विभाजन करने के लिए चीन और पाकिस्तान एकजुट हो जायेंगे। ऐसा भी प्रतीत होता है कि चीन और पाकिस्तान मिलकर भारत को धमकाने का इरादा रखते हैं।[9]

इंग्लैण्ड के राष्ट्रमंडल सचिव श्री डंकन सैंडीज और अमेरिका के विदेश मंत्री जब भारत आये, तो उनकी यात्रा का उद्देश्य था चीन के आक्रमण के विरूद्ध भारत को जिन रक्षा उपकरणों की आवश्यकता है, उनका आकलन किया जाय। इन दोनों ने भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति पर दबाव बनाकर समस्याओं का समाधान करने के लिए समझौता वार्ता करने पर दोनों को राजी कर लिया। इंग्लैण्ड और अमेरिका दोनों ही चाहते थे कि भारत व पाकिस्तान को अपनी समस्याओं का समाधान करने के लिए समझौता करना चाहिए। इस समझौते के पीछे उनकी तात्कालिक चिन्ता यह थी कि भारत को रक्षा उपकरणों की सहायता देने पर पाकिस्तान को कैसे समझाया जाय, क्योंकि इस मुद्दे पर पाकिस्तान ने अमेरिका व इंग्लैण्ड के विरूद्ध हिंसात्मक प्रदर्शन भी किये थे और पाकिस्तान यह धमकी दे रहा था कि वह कम्युनिस्ट चीन के साथ शामिल हो जाएगा और उसके साथ अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर कर देगा। पाकिस्तान के कम्युनिस्ट में शामिल होने से उसकी C.E.N.T.O. व S.E.A.T.O. की सदस्यता समाप्त हो जाती। इस धमकी का पश्चिमी देशों को फायदा हुआ क्योंकि भारत भी बिना नतीजे की परवाह किये वार्ता के लिए सहमत हो गया।

भारत अपने अधिकारों का सख्ती से प्रयोग करेगा तो इस समझौते से केवल कड़वाहट ही सामने आयेगी। कश्मीर जैसे आवश्यक मुद्दे पर यदि भारत समर्पण कर देता है तो इससे जनता हतोत्साहित हो सकती है। राष्ट्रप्रेमी भारत के लोग इसको बर्दाश्त नहीं कर पायेंगे और पाकिस्तान की भूख इसके बाद शान्त हो जायेगी यह भी नहीं कहा जा सकता। आज एक तिहाई कश्मीर पर उसका अवैध कब्जा है। भारत ने भी उसे वापस लेने की कोशिश नहीं की। लेकिन पाकिस्तान इससे भी संतुष्ट नहीं है। वह कश्मीर के बांकी क्षेत्र को भी हड़पना चाहता है। पाकिस्तान की हरकतों से लगता है कि वह भारत की कठिनाइयों का फायदा उठाना चाहता है। भारत को आवश्यकता है कि वह भारत व पाक के बीच की समस्याओं को नजर अंदाज कर दे। यदि वार्ता करनी है तो भारत को विभाजन से पहले के ऋण भुगतान और विस्थापितों की सम्पत्ति के दावों का निपटारा जैसे प्रश्न पाकिस्तान के सामने उठाने चाहिए।

प्रधानमंत्री नेहरू ने पाकिस्तान को आश्वासन दिया था कि भारत की ओर से युद्ध की शुरूआत नहीं की जायेगी। क्या उस समय पाकिस्तान को जवाब नहीं मिलना चाहिए था। यदि चीन, पाकिस्तान के साथ अनाक्रमण संधि पर विचार कर सकता है तो भारत के साथ ऐसा करने में क्या दिक्कत है।[10]

पाकिस्तान एक बार फिर से कश्मीर के मुद्दे को सुरक्षा परिषद् में ले गया, क्योंकि कश्मीर के संविधान में प्रस्तावित कुछ परिवर्तनों पर उसे आपत्ति थी। उसने कश्मीर मुद्दे को सुरक्षा परिषद् में ले जाने का निर्णय इसलिए किया क्योंकि वह पूर्वी बंगाल में अपनी आपराधिक गतिविधियों को छुपाने का प्रयास कर रहा था। पूर्वी बंगाल में हिन्दू किसी भी प्रकार से सुरक्षित नहीं हैं। वहां मारे गये लोगों का कोई ब्यौरा नहीं है। पाकिस्तान योजनाबद्ध तरीके से हिन्दुओं को देश छोड़ने के लिए विवश कर रहा है। भारत इस मुद्दे को वैश्विक संगठन में न ले जाय, इस भय से पाकिस्तान विश्व का ध्यान कश्मीर मुद्दे की ओर आकर्षित कर रहा है।[11]

सन् 1949 में भारत और पाकिस्तान के बीच समझौता इस आधार पर हुआ कि पहले पाकिस्तान अपनी सारी फौजों को हटाएगा और आजाद कश्मीर के सशस्त्र बल को समाप्त कर देगा। फिर उसके बाद भारत, कश्मीर से अपनी सैन्य क्षमता को कम करने के लिए आगे बढ़ेगा, ताकि राज्य में कानून व्यवस्था स्थापित हो सके।

कश्मीर मुद्दे पर सरकार के कदम पीछे हटने के कारण उस पर संदेह किया जा रहा है। इस संदेह को दूर करने के लिए सरकार को ठोस कदम उठाने होंगे और यह साबित करना होगा कि सरकार जम्मू–कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग मानती है।

पं0 दीन दयाल उपाध्याय ने अपने वक्तव्य में कहा कि अनुच्छेद 370 को तुरन्त समाप्त कर देना चाहिए और भारत के संविधान को पूरे जम्मू–कश्मीर में लागू कर देना चाहिए। ऐसा नहीं करने का मतलब होगा कि सरकार जनता को भुलावे में रख रही है।[12]

इस बात से सभी अवगत हैं कि जम्मू–कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। लेकिन पाकिस्तान हमेशा से ही उस पर

अपने अधिकार का दावा करता आया है। यह मुद्दा भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद का सबसे बड़ा कारण है। जम्मू–कश्मीर में हर रोज घुसपैठ और आतंकवाद जैसी घटनाएं हो रही हैं। जिनके पीछे बहुत बड़ा हाथ पाकिस्तान का है। यह संघर्ष कब थमेगा, इसके अभी तक कोई आसार नजर नहीं आ रहे हैं, क्योंकि भारत अपनी इस अमूल्य धरोहर को किसी भी स्थिति में नहीं छोड़ेगा और पाकिस्तान उसके लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार है। भविष्य में भी इस विवाद के सुलझने के कोई आसार नजर नहीं आ रहे हैं।

संदर्भ सूची

1– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्ण वाडमय, खंड– 4, सम्पादक– डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकााशन, पृ 123, 124
2– डॉ. खन्ना वी. एन., अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, एस बी पी डी पब्लिकेशन आगरा, पृ 179–182
3– उपाध्याय दीन दयाल, सम्पूर्ण वाडमय, खंड–4, सम्पादक– डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ 182 से 185
4– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्णू वाडमय, खडं– 7, सम्पादक– डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ 296
5– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्णू वाडमय, खंड– 8, सम्पादक– डाॅ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ 58 से 60
6– वही, पृ 140 से 143
7– वही, पृ 298, 299
8– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्णू वाडमय, खंड– 9, सम्पादक– डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ 34
9– वही, पृ 42 से 46
10– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्ण वाडमय, खंड–10, सम्पादक– डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन,पृ 95 से 97
11– वही, पृ 275 से 279
12– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्ण वाडमय, खंड–11, सम्पादक– डाॅ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ 140,141
13– डॉ. जैन पुखराज, डॉ. फड़िया बी. एल., भारतीय शासन एवं राजनीति राज्यों की राजनीति सहित साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ 222,223
14– उपाध्याय दीनदयाल, सम्पूर्ण वाडमय, खंड– 13, सम्पादक– डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ 45,46